दण्ड भय और मानवता के बीच फांसी की सजा की समीक्षा

दण्ड के चार प्रमुख उद्देश्य होते हैं–(1)अपराधी के मन में भय (2)समाज में अपराध के प्रति आकर्षण में कमी (3)सामान्य समाज में कानून के प्रति विश्वास वृद्धि (4)पीड़ित के प्रति न्याय। इन चारों उद्देश्यों का लगभग समान महत्व होता हैं। दण्ड का उद्देश्य कभी हृदय परिवर्तन नहीं होता न ही दण्ड से मानवीयता का कोई सम्बन्ध होता है। हृदय परिवर्तन अथवा मानवता का प्रयोग दण्ड प्रक्रिया के पूर्व के सामाजिक प्रयोग होते हैं। इनका दण्ड प्रक्रिया में कोई महत्व नहीं। पाश्चात्य विचारधारा ने इन अनावश्यक शब्दों को दण्ड प्रक्रिया के साथ घालमेल किया अन्यथा भारतीय दण्ड प्रक्रिया का उद्देश्य सिर्फ दण्ड के भय के माध्यम से ही व्यक्ति में सुधार लाने का प्रयास होता है,हृदय परिर्वतन के माध्यम से नहीं।

भावनात्मक उद्वेग में किये गए अपराध और सोच समझकर किये गए अपराध के दण्ड में बहुत फर्क होता है। भावनात्मक अपराध में सामाजिक अपमान तथा दण्ड मिलकर सुधरने के अवसर पैदा करते हैं, दूसरी ओर सोच समझकर किये गए अपराधों में कठोरतम दण्ड भी अपर्याप्त ही होते हैं। दण्ड की मात्रा तथा प्रकार का आकलन उस समय की देश काल परिस्थिति के आधार पर किया जाता है। यदि समाज में अपराधियों के प्रति सामान्यतया भय नही है तो दण्ड में मानवता का प्रतिशत शामिल किया जाता है और यदि समाज में सामान्यता अपराधियों से भय है तो दण्ड को उस सीमा तक अमानवीय किया जाता है जहॉ तक दण्ड अपराधियों के मन में भय पैदा करने में सफल हो सके, भले ही वह दण्ड कितना भी अमानवीय क्यों न हो। इस आधार पर आकलन करें तो दण्ड की इस्लामिक तथा साम्यवादी प्रणाली आदर्श मानी जाती हैं। इन दोनों में अपराध नगण्य होते हैं। किन्तु इन दोनों प्रणालियों में एक बहुत बड़ी कमी भी है कि इनमें आरोपी तथा पीड़ित के बीच तटस्थ समीक्षा के न्यायिक अवसर बहुत कम होते हैं। पश्चिम में सामान्यतया अपराध कम होने से वहॉ की न्यायिक प्रक्रिया भी आदर्श मानी जाती है तथा दण्ड में भी मानवता के समावेश की पर्याप्त गुंजाइश रहती है किन्तु भारत की परिस्थितियॉ इन सबसे भिन्न हैं। यहॉ न्याय और दण्ड में दोनों के बीच का मार्ग चुना जाना चाहिए था किन्तु भारत ने यहॉ के सामाजिक परिवेश का ठीक–ठीक आΩकलन न करके पश्चिम की प्रणाली का अंधानुकरण किया जिसका परिणाम हुआ कि भारत में अपराधियों के मन से भय तथा शेष समाज के मन से कानून के प्रति विश्वास घटता चला गया।

भारत को न तो इस्लामिक साम्यवादी अन्याय पूर्ण दण्ड प्रणाली को अपनाना चाहिए था न ही पश्चिम की अधिकतम मानवीय प्रणाली को। भारतीय प्रणाली पूर्व में भी उचित दण्ड की ही रही है और रहनी भी चाहिए थी किन्तु भारत ने उचित दण्ड के स्थान पर न्यूनतम दण्ड का मार्ग पकड़ा। सम्भवतः भारत की इस प्रणाली में पश्चिम के साथ गॉधी जी का भी प्रभाव था जिसमें गॉधी जी ने उचित दण्ड की जगह राज्य को न्यूनतम हिंसा की सलाह दी थी। गॉधी जी से यह भूल कैसे हुई यह इस लेख का विषय नहीं किन्तु भूल हुई यह निर्विवाद है। यदि राज्य उचित हिंसा के स्थान पर न्यूनतम हिंसा का मार्ग पकड़ता है तो उसके परिणाम स्वरुप समाज में अपराधियों के मन से भय और समाज के मन से कानून के प्रति विश्वास घट जाता है और इन दोनों का परिणाम होता है कि समाज में स्वयं दण्ड देने की इच्छा या मजबूरी बढ़ती जाती है,जिसका अन्तिम नतीजा होता है समाज में हिंसा के प्रति बढ़ता विश्वास। आज समाज में लगातार हिंसा के प्रति बढ़ते विश्वास का यही एकमात्र कारण है।

भारत की एक दूसरी समस्या भी है। पश्चिमी जगत, भारत में अपराधियों में घटते भय का आकलन किये बिना ही, यहॉ के तथा कथित सामाजिक कार्यकर्ताओं को सम्मान या पारितोषिक का आकर्षण देकर अथवा प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता से एन.जी.ओ. खड़े करके दण्ड को अधिक से अधिक मानवीय बनाने की कोशिश कराता रहता है। हमारे देश के ये ना समझ लोग ना समझी या प्रलोभन में पश्चिम के इस प्रयास को सफल बनाने की कोशिश में लग जाते हैं। किरण वेदी,शशि थरुर,सरीखे सैकड़ों हजारों लोग कैदी जीवन सुधार,जेल सुधार,जैसे अनेक प्रयत्नों में दिन रात लगे रहते हैं। हमारे कई गॉधीवादी तो कैदियों के बीच प्रवचन को भी बहुत बड़ा काम मानते हैं भले ही उन्होंने जेल के बाहर घूम रहे हजारों जघन्य अपराधियों को कभी कोई प्रवचन न दिया हो।देश,काल परिस्थिति का आकलन किए बिना ही स्वार्थ वश ये प्रयत्न समाज में असंतुलन पैदा करते रहते है।

निर्भया कांड के समय समाज में फांसी की उपयोगिता के पक्ष में वातावरण बनाने की एक मजबूत और सफल कोशिश हुई तथा दो ढाई वर्ष बाद ही याकूब मेनन की फांसी के विरोध में भी एक मजबूत और सफल कोशिश हुई। निर्भया कांड के समय फांसी के विरुद्ध बोलने वाले लगभग चुप थे और याकुब मेमन के समय वही लोग आकर इस तरह दहाड़ रहे हैं जैसे यही सबसे पहला काम बचा हो। दोनों घटनाओं के परिप्रेक्ष्य बिल्कुल भिन्न हैं। निर्भया कांड एक भावनात्मक उबाल था जिसमें काम भूख की छटपटाहट का उद्वेग था। यह उद्वेग क्षणिक था। यदि डकैती और बलात्कार की तुलना करें तो डकैती बलात्कार की अपेक्षा कई गुना ज्यादा गंभीर अपराध है क्योंकि अधिकांश बलात्कार क्षणिक उद्वेग के होते हैं और डकैती सोची समझी साजिश। दूसरी ओर याकूब मेमन के अपराध में कहीं भी क्षणिक उद्वेग नहीं था,कोई तात्कालिक क्षुधा शान्ति की मजबूरी नहीं थी,घटना के शीघ्र बाद पश्चाताप नहीं था बल्कि घटना के बाद सफलता पर एक स्पष्ट कुटिल सफलता का प्रोत्साहन था। मैंने तो यहॉ तक देखा है कि अनेक वामपंथी निर्भया कांड के समय फांसी के पक्ष में आन्दोलन को हवा दे रहे थे तो आज वही फांसी के विरुद्ध ताल ठोक कर

खड़े हैं। यदि याकूब मेमन के परिवार के लोग विरोध करें अथवा प्रशान्त भूषण,जेठमलानी जैसे अनेक वकील विरोध करें तो समझ में आता है किन्तु अनेक सांसद,शशिथरुर सरीखे गंभीर राजनेता अथवा तथाकथित विचारक आकर खड़े हो जावें तो गंभीर चिन्ता का विषय है। यह सच है कि फांसी की सजा जारी रहते हुए भी अपराधियों में भय नहीं बन रहा तो क्या फांसी की सजा हटा देने से अपराधियों के मन में भय बढ़ने का कोई अनुमान है? इन तथाकथित सक्रिय फांसी विरोधियों को यह उत्तर देना ही होगा कि फांसी की सजा हटने का भय वृद्धि पर कोई सकारात्मक प्रभाव कैसे पड़ेगा और यदि नहीं पड़ेगा तो विचार मंथन इस बात पर केन्द्रित होना चाहिए कि भय वृद्धि के लिये फांसी की सजा को और प्रभावी कैसे बनाया जाए। या तो कुछ विशेष मामलों में चौक पर खुली फांसी की सजा देनी शुरु करें और फांसी की सजा को ज्यादा मात्रा में कार्यान्वित करना चाहिए अथवा फांसी का कोई और कठोर अमानवीय मार्ग खोजा जाए जिसका समाज पर व्यापक प्रभाव पड़े। फांसी की सजा वर्तमान समय में अल्प प्रभावी हो चुकी है और इसे अधिक प्रभावी बनाने के लिये कुछ न कुछ तो हमें करना ही होगा। हम जागरुक लोग इन परिस्थितियों की इसी तरह तो अन्देखी नहीं कर सकते। हमें प्रभावी विकल्प तो तलाशना ही होगा और ऐसे प्रभावी विकल्प पर चर्चा आवश्यक है न कि फांसी की सजा हटाने की आवाज करने वाले मेंढको की टर्र–टर्र पर।

मैं पूरी तरह सहमत हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता है और होनी चाहिए। जिन लोगों ने फांसी की सजा के पक्ष या विपक्ष में अपने विचार व्यक्त किये यह उनका मौलिक अधिकार है किन्तु किसी को भी यह अधिकार नहीं कि आप किसी पक्ष या विपक्ष में कोई क्रिया करें। यह क्रिया भले ही संविधान सम्मत हो किन्तु है पूरी तरह अपराध। याकूब मेमन के मामले में संबद्ध पक्षों या उनके वकीलों के अतिरिक्त जिन लोगों ने कहीं कोई लिखित आवेदन दिया, प्रदर्शन किए या जुलुस निकाले वे पूरी तरह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन था, अपराध था और इसलिए वामपंथी लोग फांसी के विरुद्ध और शिवसेना वाले समर्थन में जुलुस निकालें, यह तो उनका पुश्तैनी धंधा है किन्तु अन्य लोगों को ऐसे गलत कामों के पक्ष या विपक्ष से बचना चाहिए।

फांसी की सजा को अधिक प्रभावी बनाने के लिए अधिक मात्रा में फांसी या खुले चौक की फांसी का तो एक विकल्प है ही किन्तु फांसी की सजा को अधिक प्रभावी बनाने पर एक नई सार्थक बहस भी जोर पकड़ रही है। इसके अनुसार फांसी की सजा पाये व्यक्ति द्वारा स्वैच्छिक आवेदन करने पर उसे अपनी दोनों आंख निकालकर पूरी तरह अन्धा रहते हुए आवश्यक शर्तो पर न्यायालय उचित जमानत पर तब तक छूट जाने की अनुमति दे सकता है जब तक वह रहना चाहे। यह फांसी की सजा का एक अच्छा विकल्प है। इससे कई लाभ होंगे। जमानत देने वालों का भी दायित्व बढ़ेगा। साथ ही ऐसे लोगों को देख कर समाज में लगातार प्रभावोत्पादक संदेश जाता रहेगा। ऐसे व्यक्ति का परिवार भी निरंतर प्रतीक्षा करेगा कि वह मरे क्योंकि ऐसा व्यक्ति एक बोझ बना रहेगा। साथ ही मृत्युदंड का एक विकल्प खड़ा होने से फांसी विरोधियों का मुँह भी बन्द हो सकेगा। इस विकल्प से हमारे चारों उद्देश्य पूरे हो सकेंगे।

(1)अपराधी को प्रायश्चित का अवसर मिलेगा (2) समाज में अपराध के प्रति भय बढ़ेगा (3) सामान्य समाज में कानून के प्रति विश्वास बढ़ेगा तथा (4)पीड़ित को लम्बे समय तक संतोष होगा।

मैं फांसी के विरुद्ध लिखना बोलना तो एक बकवास मानता हूँ तथा चाहता हूँ कि दण्ड को अधिक भय मूलक प्रभावी बनाने की दिशा में एक सार्थक विकल्प की तलाश जारी रहनी चाहिए।

1 उदयकरण सुमन,गंगानगर,राजस्थान ज्ञानतत्व 50508

प्रश्नः—ज्ञानतत्व 312 में आपने महिलाओं पर चर्चा करते समय यह लिखा कि यदि महिलाओं की संख्या कन्याभ्रूण हत्या के प्रभाव से कुछ और भी कम हो जाए तो यह समस्या का विस्तार न होकर बल्कि समाधान ही होगा। आपके इस कथन से मुझे गम्भीर निराशा हुई है। यदि कोई अन्य व्यक्ति ऐसी बात कहा होता तो मैं उसे टाल भी देता किन्तु आप जैसे गम्भीर विचारक ने यह कहा तो न तो इसे टालना सम्भव है और न ही स्वीकार करना और इसलिए मैं समझता हूँ कि इस पर आगे और विचारों का आदन–प्रदान होना चाहिए।

मुझे लगता है कि आपकी सोच वास्तविकता से परे है,निराधार है,असंगत है,और अमानवीय भी। आज विश्व स्तर पर नर हत्याओं तक को दी जाने वाली फॉसी का मानवीय आधार पर विरोध हो रहा है। दूसरी ओर एक निरपराध, अवश, मासूम जिसने अभी जन्म भी नही लिया है उसको जीने के अधिकार से वंचित कर देना कितना उचित है? आज केन्द्रीय सरकार,राज्य सरकारें तथा देश का सम्पूर्ण बौद्धिक जनमानस बेटी बचाओं में सक्रिय है,प्रधानमंत्री से लेकर सारे धर्मगुरु तक गम्भीर प्रयास कर रहें है। इतने प्रयासों के बाद भी यदि महिलाओं का प्रतिशत घट रहा है तो इस प्रयास को छोड़ देने का कितना दुष्परिणाम होगा, यह गम्भीरता आपने नहीं सोची। वर्तमान समय में देश भर के समाचार पत्र वधु चाहिए के विज्ञापनों से भरे पड़े है। शातिर लोगों ने मैरेज ब्युरो के बोर्ड लगाकर शादी दफ्तर के नाम पर लूट मचा रखी है। तीस–तीस,पैंतिस–पैंतिस वर्ष के लड़के कुवारे घुम रहे हैं,यहॉ–वहॉ घूमकर चरित्रपतन कर रहे हैं। बलात्कारों तथा सामूहिक बलात्कारों की बाढ़ आ गई है। ऐसी विकट स्थिति में आपका

कथन आग में घी डालने के समान है। नर–नारी एक दूसरे के पूरक होते है। एक आयु के बाद हर व्यक्ति को अपने से विपरीत लिंग का सानिध्य मिलना ही चाहिए। नहीं मिला तो कामापराध बढ़ेंगे। जो बलात्कार आज अंधेरे में सुनसान जगह पर हो रहे है वे खुलेआम होने लगेंगे। इस पर भी विचार करिए।

आपने विचित्र तर्क दिया है कि महिलाओं की घटती संख्या,जाति,और सम्प्रदाय व्यवस्था को भी कमजोर करेगी। मुझे इस तर्क में कोई यथार्थ नहीं दिखता। सब बातों पर विचार करके ही मैं सोच रहा हूॅ कि आपके इस कथन का जोरदार प्रतिवाद किया जाए। मुझे उम्मीद है कि आप विचार मंथन की दृष्टि से अपना कथन प्रस्तुत करेंगे जिससे कि इस विषय पर विचार मंथन आगे बढ़ सके।

उत्तर–सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि आदर्श समाज व्यवस्था में व्यक्ति,परिवार,गॉव,जिला,प्रदेश, देश और समाज के क्रम में व्यवस्था चलनी चाहिए अथवा व्यक्ति,लिंग,जाति,वर्ण,धर्म,राष्ट्र और विश्व के आधार पर? मैं व्यक्ति,परिवार,गॉव से समाज तक की व्यवस्था का पक्षधर हूॅ तथा लिंग,जाति,धर्म,राष्ट्र की व्यवस्था का विरोधी। महिला और पुरुष को अलग–अलग वर्गो में बॉटकर देखना दूसरी व्यवस्था में शामिल है जिसे मैं आदर्श नहीं मानता। मैं कन्याभ्रूण हत्या रोकने का विरोधी हूॅ, भ्रूण हत्या रोकने का नही। यदि व्यवस्था के हिसाब से आवश्यक है तो महिला पुरुष का भेद न करके समान रुप से बालक–बालिका के लिए नियम बनने चाहिए। मैं भारत को एक सौ पच्चीस करोड़ व्यक्तियों का देश मानता हूॅ इसमें मैं लिंगभेद के आधार पर कोई अलग कानून बनाने का पक्षधर नहीं। परिवार, व्यक्ति के बाद व्यवस्था की दूसरी इकाई है। आप विचार करिए कि परिवार में क्या महिलाओं को सम्पत्ति में समान अधिकार प्राप्त हैं। क्या महिलाओं को परिवार का मुखिया चुनने में समान भूमिका है? मेरे विचार से आज भी समाज व्यवस्था में महिलाएॅ दोयम दर्जे की नागरिक हैं। यदि अब–तक का भारत का पुरुष समाज महिलाओं को न परिवार व्यवस्था में समान अधिकार देने का पक्षधर है न ही कानून के आधार पर। ऐसी स्थिति में यदि किसी सामाजिक अव्यवस्था में महिलाओं की संख्या घटने लगे तो पहली आवश्यकता यह होनी चाहिए कि महिलाओं की घटती संख्या में पुरुष प्रधान मानसिकता का कितना योगदान है और उस गैप को कैसे भरा जा सकता है न कि उस समाधान की खोज करने के बजाय महिलाओं की संख्या बढ़ाकर उस समस्या का समाधान करने की। मोदी जी और रामदेव जी तथा आप भी पुरुष प्रधान मानसिकता के कारण महिलाओं की घटती संख्या की कल्पना से चिन्तित है,विचलित हैं। सारा पुरुष समाज तथा पुरुष समाज के अन्तर्गत काम कर रही पारिवारिक महिलाएॅ इस बात की कल्पना से डरे हुए हैं कि भविष्य में पत्नी कहॉ से लायेंगे,बहू कहॉ से लायेंगे, हुकुम किस पर चलायेंगे। यह बात इन लोगों में सिहरन पैदा कर देती है कि वर्तमान समय में अमानत के रुप में पालपोष कर तैयार की गई लड़कियॉ,बहूॅ के रुप में घर में आ जाती हैं। कही ऐसा न हो जाए कि लडकियों का अभाव हो जाए और अनेक लड़को को लड़कियों के घर में घर जमाई बनकर काम करना पड़े। बहुत योग्य लड़कियों से कम योग्य लड़को को विवाह करके उनके निर्देशों में काम करना पड़े। आप इस भयावह कल्पना से चिन्तित है और मैं इस कल्पना से ही प्रसन्न होकर सोच रहा हूॅ कि कब वह दिन आएगा जब परिवार में तथा कानून में महिला और पुरुष का भेद समाप्त करके परिवार के प्रत्येक सदस्य को सम्पत्ति तथा परिवार की पारिवारिक व्यवस्था के संचालन में समान भागीदारी होगी। मुझे यह स्पष्ट दिखता है कि यदि महिलाओं की संख्या का अनुपात का अन्तर पॉच प्रतिशत हो जाए तो यह परिवर्तन कल्पना नही बल्कि यथार्थ में बदल जाएगा।

नर–नारी एक–दूसरे के पूरक नहीं होते बल्कि परिवार व्यवस्था में दोनों ही सहभागी होते है सहयोगी नहीं। परिवार व्यवस्था में एक–दूसरे को सहयोगी के रुप में देखना भी अच्छा नहीं जबकि वर्तमान समय में तो नारी को पुरुष की एक पक्षीय सहयोगी मान लिया गया है। इस्लाम में यह व्यवस्था घोषित रुप से है तो हिन्दुओं में अघोषित रुप से। हम क्यों न पहले इस विचार को खण्डित करें। यदि इतना कर लिया जाए तो सम्भव है कि समाज को महिला और पुरुष के इस अनुपात को प्राकृतिक रुप से सुधारने की आवश्यकता महसूस हो जाए। व्यवस्था को ठीक किये बिना वर्तमान चल रही अव्यवस्था को ही किसी अन्य तरीके से चलाने की कोशिश करना उचित नहीं।

आपके पत्र से मुझे महसूस हुआ कि आप महिलाओं की घटती संख्या के कारण पुरुष वर्ग के समक्ष खड़ी समस्याओं की कल्पना से चिन्तित है और मैं उस चिन्ता में ही समाधान देख रहा हूॅ। मैं नहीं समझता कि जीवित महिलाओं को विकृत व्यवस्था में समान अधिकार से वंचित रखना मानवता है और अजन्मी कन्याओं की भ्रूण हत्या मानवता के विरुद्ध। कृपया मानवता की परिभाषा भावनाओं के आधार पर तय न करके विचारों के आधार पर करने की कृपा करे।

2 नरेन्द्र सिंह, कछवाहा, राजसमंद, राजस्थान, ज्ञानतत्व 52735

विचार–ज्ञानतत्व 311 आधोपान्त पढा। जैसा कि मैंने पूर्व में लिखा था कि ज्ञानतत्व विचारोत्तेजक सामग्री से परिपूर्ण होता है। इस ज्ञानतत्व 311 में आप पार्टी, नरेन्द्र मोदी, केजरीवाल, अन्ना हजारे, लोक स्वराज्य, अव्यवस्था, तानाशाही, महिला सशक्तिकरण, कश्मीर आतंकवाद,दल–बदलकानून, भारतीय जनता पार्टी का आचरण, मीडिया की अवधारणा करने में भूमिका मुस्लिम समाज जनसंख्याा विस्तार की समस्याएं, साम्यवाद, किसान आत्महत्या, भूमि अधिग्रहण बिल का विवाद, भारत मे कृषि बनाम उद्योग से

विकास की अवधारणा तथा अंत मे व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी तथा उसका आव्हान आदि सामग्री दी गई हैं। वर्तमान भारतीय जमीनी हकीकत से ये मत–विमत कितने निकट है यह विचारणीय है।

अधिकांश समस्याओं की जड वह टकराव है, जो परम्परागत बहुसंख्यक भारतीय सोच तथा पिछले 67 वर्षो में(1947 में भारत की स्वतंत्रता उपरान्त) आयातित विदेशी माप दंडो की तथाकथित विकास की अवधारणा के मध्य टकराव है।

हमने भारत के विदेशी चश्मे और नजरीये से विकसित करने का वातावरण बना कर उसके आधार पर आगे बढने याने अपना विकास करने की सोच के साथ चले। 67 वर्षो बाद जबतक देश समाजवाद मनमोहन सिंह, नरेन्द्र मोदी आदि के सोच के अनुसरण मे चलने उपरान्त लगभग उन सभी समस्याओ से रूबरू है जो स्वतंत्रता के समय थी। भौतिक विकास, पाश्चात्य, शिक्षा, सुविधा, साधन, यंत्रीकरण, तकनीक आदि ने भारत को विकास की चकाचौध तो दिखाई। टी0वी0, मोबाइल, मोटरसाइकिल, कारों, फोरलेन, खनन, विदेशी निवेश के आग्रह आदि ने आधुनिकता के साथ प्राकृति और पारस्परिक हितो को सवर्था नकार दिया। राजनैतिक, सामाजिक, पारिवारिक व्यवहार मे आत्मीयता, स्नेह, प्रेम, श्रद्धा, नैतिकता आदि अव्यावहारिक तथा पिछडेपन के सूचक हो गये। केवल धन, साधन सुविधाऐं हमारे जीवन के लक्ष्य बन कर रह गये। इसी दौड मे विदेशियों के साथ भारतीय भी सम्मिलित हो गए। भारतीय सोच को नकारात्मक मान लिया गया। क्या हम भारतीय समस्याओं को भारत तथा भारतीयों के नजरिए से सोचने की कभी कोशिश करेगें? भारत कब–तक सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्र मे प्रयोगशाला बना रहेगा? कब तक हम हमारे विकास के नाम पर नये–नये प्रयोग करते रहेंगे? क्या कभी हम भारत को भारत की दृष्टि से विकसित करने का मानस बना पायेंगे?

सच तो यह है कि भारत के जन प्रतिनिधि सरकार तथा प्रशासन का सोच व व्यवहार वही है जो अंग्रेजों का भारतीयों के साथ था। ये सभी सत्ता के माध्यम से शासक के रूप में शोषक है, जबकि आम आदमी याने सामान्यजन शासित के तौर पर शोंषित बन कर रह गया है।

यदि किसी परिवर्तन की आवश्यकता है तो भारतीय जनमानस के सोच मे परिवर्तन की आवश्यकता है कि वह आयतित नजरिये से सोचने के बजाय भारतीय नजरिये से देश के विकास की अवधारणा पर चिन्तन करें। क्या कभी यह सम्भव होगा?

उत्तर–आपके विचार पुरी तरह सच है, किन्तु समाधान पर सोचना होगा। स्वतंत्रता के बाद भारत जिस लीक पर चला उसमे भौतिक उन्नति तो हुई और नैतिक समस्याएं बढती ही गईं। किन्तु आर्थिक स्तर पर भी भारत दुनिया के अत्यंत पिछडे देशों मे ही रहा। अपराध भ्रष्टाचार नैतिक पतन साम्प्रदायिकता और जातीय कटुता भी बढी तथा आर्थिक मामलों मे भी आर्थिक असमानता तथा श्रम शोषण का विस्तार ही होता गया। यदि भारत किसी एक दिशा मे तेज गति से बढा होता तो भारत को प्याज और जूता दोनों एक साथ नही खाने पडते।

आज तक न पुराने लोग भारतीय सोच को समझ पाये न ही नये लोग। पुराने लोगों ने नासमझी मे बीच का मार्ग चुना। यह बीच का मार्ग भौतिक उन्नति के मामले मे भी विश्व प्रतिस्पर्धा मे आगे नहीं निकल पाया तथा भारतीय सोच को भी नही बढा सका। वर्तमान समय मे मोदी जी ने दोनो में से एक मार्ग चुनकर भौतिक विकास को तेज करने की राह पकडी है। सम्भव दिखता है कि भारत आर्थिक मामलों मे आगे निकल सके। वर्तमान समय में दुनिया के अनेक देश भारत की अपेक्षा हर मामले मे ज्यादा सुखी दिखते है। भारत में जो ग्यारह समस्याएं लगातार बढ रही है वे दुनियां के अन्य विकसित देशो में न के बराकर है। कही इसका यह कारण तो नही कि पश्चिम के विकसित देशों में राज्य का समाज के मामलों मे न्यूनतम हस्तक्षेप है। राज्य आंतरिक मामलों मे न्याय और सुरक्षा तक सीमित है तथा आर्थिक मामलों मे विश्व से प्रतिस्पर्धा करके आगे निकलने की कोशिश तक सीमित है। भारत मे बिल्कुल उल्टी स्थिति रही है। हम भारतीय आत्मीयता, स्नेह, प्रेम, श्रद्धा, नैतिकता की वृद्धि के लिए सरकार से उम्मीद कर रहे है किन्तु ज्यों– ज्यों सरकार इस दिशा मे बढने की कोशिश करती है त्यों–त्यों ये सब गुण और पीछे जाते दिखते हे। मोदी जी जो भौतिक विकास की दिशा मे ज्यादा तेंज चलना और अन्य भारतीय पद्धति में पीछे जाते दिखते है, वह पिछली सरकारों की अपेक्षा कई गुना अच्छी स्थिति है। सम्भव है कि इस तरह भविष्य में मोदी सरकार सामाजिक मामलों में हस्तक्षेप कम कर दे।

इस दिशा में मोदी जी ने एक नया प्रयोग किया है। सम्पन्नों को कानून बनाकर गैस सब्सीडी से रोकना तात्कालिक समाधान है, किन्तु मोदी जी लोगों को स्वेच्छा से छोडने हेतु प्रेरित कर रहे है। सफलता संदिग्ध है फिर भी एक प्रयोग तो है ही। मेरे परिवार में भी दो मत थे। कुछ लोग चाहते थे कि जब और लोग नही छोंड रहे तो हम ही क्यों आगे आवें। कुछ अन्य लोग चाहते थे कि चाहे अन्य लोग पहलकरें या नहीं किन्तु हमें तो करना चाहिये। अन्त मे छोडना तय हुआ। राजनैतिक सक्रियता तथा सामाजिक सक्रियता बिल्कुल भिन्न विषय हैं। पश्चिम हर मामले में गलत और भारत हर मामले में ठीक मानना उचितनहीं। राजनैतिक मामलों में पश्चिम भारत की अपेक्षा ठीक है। दूसरी ओर भारत राजनैतिक मामलों में गलत तथा सामाजिक मामलोंमें सबसे अच्छा है। भारत ने स्वतंत्रता के बाद आज तक कभी राजनैतिक मामलों में पश्चिम की नकल नही की। उसने हमेशा ही पूर्व अर्थात समाजवादी, साम्यवादी राजनीति की नकल की। पूर्व के देशों में परिवार, गांव, समाज आदि का अस्तित्व नहीं होता। सारे

अधिकार सरकार के पास होते है। हमारे नेताओं ने परिवार, समाज को पूर्व की नकल करके अधिकार विहीन किया तथा स्वयं को मजबूत किया। दुर्भाग्य से हम लोग इन सबके लिए पश्चिम को गाली देते है जो ठीक नहीं। यह विषय गंभीर भी है और जटिल भी। और विचार–मंथन चाहिए।

मैं आपके कथन से सहमत हूँ कि भारतीय नजरिये से देश के विकास की अवधारणा विकसित हो। किन्तु यह कार्य कैसे हो? इस सम्बन्ध में समाज को क्या–क्या करना है तथ राज्य को क्या करना है इसकी स्पष्ट अवधारणा के अभाव मे हमारी सलाह अधूरी है।

3 श्री महेश चंद्र शर्मा, दिल्ली,जनसत्ता 10 जुलाई

विचारः–क्या भारत मे दो संवेदना क्षेत्र बन गए है। हिन्दू संवेदना क्षेत्र और मुसलिम संवेदना क्षेत्र? यह प्रथम वाक्य है अपूर्वानंद के लेख का। यह वही सवाल है जो आजादी के आंदोलन मे अंग्रेजों ने भारत से पूछा था कि क्या कांग्रेस (हिन्दू) की आजादी मुसलमानों की भी आजादी होगी? कांग्रेस ने इसका जवाब नहीं दिया? मोहम्मद अली जिन्ना ने इसका जबाव दिया कि यह मुसलमानों की आजादी नहीं होगी। कांग्रेस ढुलमुल थी। उसने कसमें खाई कि वह अल्पसंख्यको को संतुष्ट करेगी। मुसलिम लीग के द्विराष्ट्रवाद कांग्रेस के मिश्रित राष्ट्रवाद और कम्युनिस्टों के बहु राष्ट्रवाद मे तत्वतः कोई अंतर नही था। मात्रा भेद के साथ ये लोग समविचारी थे। परिणामतः मजहब के आधार पर भारत का विभाजन हुआ। अपूर्वानंद का यह प्रथम वाक्य निपट द्विराष्ट्रवादी है। क्या भारत पुनः विभाजित होगा? तथाकथित हिन्दू और मुसलमान एक ही देश एक ही संस्कृति और एक ही प्रकार के महापुरूषों की संतान है। इनके बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक मे बांटना एक विषैला विचार है जो साम्राज्यवादियों ने भारत की राजनीति मे घोला है। वे अंग्रेज साम्राज्यवादी ही थे। जिन्होंने मुसलमानों को पढाया कि वे मध्ययुगीन आक्रमणकारियों संतान हैं। भारत का मुसलमान न अल्प संख्यक है न ही मध्ययुगीन आक्रमणकारियों की संतान। वे तो भारत माता की ओरस संताने है। अपूर्वानंद अभी भी इस साम्राज्यवादी विष के विक्रेता बने हुए है। भारत विविधताओं से भरा विराट देश है। गृह कलह के समान कुछ सामाजिक तनाव और सामुदायिक वैमनस्य यहां सदा ही रहे हैं। लेकिन यहां का सामान्यतः स्वर न्यायप्रियता ओर एकात्मता का रहा है। परिणामतः भारत माता की गोद मे इतनी विविधताएं पल पाई। हमारे देश में कुछ लोग है जिन्हें लगता है कि कोई भी घटना हो तथाकथित हिन्दू कभी गलत नहीं होता है। अपूर्वानंद को लगता है कि कोई भी घटना हो मुसलमान कभी गलत नहीं होता है। वे स्वयं एक खेमे के वकील बन गए है,इसलिएउन्हें अन्य लोग दूसरे खेमे के दिखाई देते है। कमाल की दृष्टि है यहां। आज हम एक विकृति के शिकार हैं। हम अपराधी को अपराधी के रूप मे नहीं उसे जाति या सम्प्रदाय के प्रतिनिधि के रूप मे पहचानने लगे है। परिणाम न्यायप्रियता के स्थान पर खेमेबंदी हो गई हैं। इस विचार के खिलाफ हमें लडना होगा। जो खेमेबंदी के शिकार होंगे वे यह लडाई नहीं लड सकते। मूल बुराई से भी भयानक हैं ये खेमाबंदी लोग। जिस जातीय और मजहबी समुदाय में जब कोई दोष दिखाई दे और उसे दुरूस्त करने के लिए जो आगे आये, देश को उन लोगो की जरूरत है। उनकी नहीं जो दोषो के बहाने समाज को विभक्त करने में अपनी बुद्धिमानी समझतें है। भारत को एक देश एक जन और एक संस्कृति के आधार पर उठना होगा। विविधताओं का पोषण भारतीय संस्कृति की विशेषता है। विविधताओं को विभेद में बदलने के हर प्रयत्न को विफल करना हमारा राष्ट्रीय कर्तब्य है।

उत्तर –आपने श्री अपूर्वानंद को कोई तटस्थ विचारक या साहित्यकार मानकर यह समीक्षा की। मेरे विचार में आप भूल गए कि अपूर्वानंद तटस्थ न होकर एक गुट का प्रतिनिधित्व करते है। जनसत्ता सत्रह मई में एक आमंत्रण छपा था जो इस प्रकार था। नई दिल्ली 16मई (जनसत्ता)। सांस्कृतिक संस्था 'कविता : ने रविवार सोलह मई के बाद की बदली परिस्थिति और सांस्कृतिक चुनौतियों पर इंडियन सोशल इस्टिटयूट लोधी रोड, में सम्मेलन का आयोजन किया हैं। कार्यक्रम के आयोजको में से एक अभिषेक श्रीवास्तव ने कहा कि पिछले साल 16 मई को देश का निजाम बदलने के बाद कुछ कवियों पत्रकारों और संस्कृति कर्मियों ने यह सांस्कृतिक पहल शुरू की थी। इसके मूल में चिन्ता थी कि केन्द्र में आई नई सरकार के संरक्षण में तेजी से जो राष्ट्रवादी और विभाजनकारी माहौल हमारे समाज में बन रहा है, उसके बरक्स एक सांस्कृतिक प्रतिपक्ष खडा किया जा सके। हमारी कोशिश है कि सभी प्रगतिशील जमातो से असहमति के स्वरों को एक मंच पर लाया जा सके। कार्यक्रम में अपूर्वानंद, अनिल चमडिया, तैयब हुसैन, रेयाज उल हक, आनंद स्वरूप वर्मा, पंकज विष्ट, मंगलेश डबराल, असद जैदी, इब्बारा, रवी विष्णु नागर, रंजीत वर्मा, सीमा आजाद, बल्ली सिंह चीमा, अनुज लुगुन महादेव टोप्पो, वीरेन डंगवाल जैसे कलम नवीसो व जन आंदोलनों से जुडे लोगो की मौजूदगी रहेंगी''

लम्बे समय से भारतीय सत्ता से वामपंथी साहित्यकारों का एक गठजोड बना हुआ था। रूस चीन में वामपंथ के पतन के बाद भारत के वामपंथियों ने भी इस्लामिक कटटरवाद का साथ लेना और देना शुरू किया। सभी अच्छे–अच्छे वैचारिक साहित्यिक कलात्मक पदो पर इन सबको ही रखा गया। राजनीति ने ऐसे लोगों को बिना किसी जांच परख के ही विचारक

साहित्यकार की पहचान दिला दी और इन सबने ऐसे नेताओ को योग्यता के प्रमाण पत्र दे दिये। प्रमाण पत्रों का आदान–प्रदान सरसठ वर्षो से निर्वाध चलता रहा।

इस वामपंथी इस्लामिक गठजोड द्वारा प्रमाण पत्रों के आदान–प्रदान से टक्कर देने का काम संघ परिवार लम्बे समय से करता रहा है किन्तु उसे अपेक्षा कृत सफलता नही मिली। पिछले वर्ष मोदी सरकार बनने के बाद अब दूसरे गुट की बारी है। न पहला गुट स्वतंत्र था न नया । दोनो का उददेश्य लगभग एक है किन्तु साम्प्रदायिक इस्लामिक गठजोड की तुलना में साम्प्रदायिक हिन्दू सशक्तिकाण कम खतरनाक होगा। दोनो गुटों को सत्ता समर्थन रहा ही है।पिछले समय में कांग्रेस का अपने गुट को था और अब नये बन रहे गुट को भाजपा का समर्थन रहेगा किन्तु जिस तरह पुराने गुट को विदेशी समर्थन था उस तरह का विदेशी समर्थन नये गुट को नहीं मिलेगा। हर मामले में सी0बी0आई0 की जांच की मांग करने वाला पुराना गुट तीस्ता सीतलवार्ड की सी0बी0आई0 जांच का विरोध कर रहा है।

फिर भी अभी इस पुराने गुट ने हार नहीं मानी हैं। योजनाए बन रही है। ये लोग यदि आवश्यक हुआ तो समाज अथवा देश के विभाजन की सीमा तक भी जा सकते है। तटस्थ विचारको का कर्तव्य है कि ऐसी खतरनाक सोच को परास्त होते तक अपनी तटस्थता को आंशिक रूप से साम्प्रदायिक हिन्दुओं की दिशा मेंझुका कर चले। हम किसी भी रूप मे हिन्दू साम्प्रदायिकता का समर्थन नहीं कर सकते। हम गाय, गंगा, मंदिर, हिन्दूराष्ट्र की जगह सहभागी लोकतंत्र, समान नागरिक संहिता, धर्म परिवर्तन कराने पर रोक जैसे मुद्दे आगे लाते रहेंगे किन्तु हम सतर्क रहेंगे कि वामपंथी साम्प्रदायिक इस्लामिक ,खान्दानी शासन गठजोड हमारे प्रयत्नों से मजबूत न हो पावें। इस पुराने गुट की रीढ कमजोर होते ही हम तटस्थ होकर ईमानदार समीक्षा करना शुरू कर देंगे। पहले गुट की अपेक्षा साम्प्रदायिक हिन्दुत्व से टकराना बहुत आसान होगा क्योंकि हिन्दू न कभी साम्प्रदायिक रहा है न रहेगा। वर्तमान हिन्दू साम्प्रदायिकता मुस्लिम साम्यवादी गठजोड के सम्भावित खतरे के विरूद्ध मजबूत होती दिख रही है। इस खतरे को ज्योही समाप्त कर दिया जाएगा त्योंही हिन्दू साम्प्रदायिकता के विरूद्ध जनमत बनना शुरू हो जाएगा। अपूर्वानंद सरीखे व्यक्ति को विचारक साहित्यकार या तटस्थ सोचने वाला व्यक्ति मानने में ही सारी भूल छिपी है।

4 एम एल चौहान बालाघाट म0प्र0, ज्ञानतत्व–42554

विचार–आपका ज्ञानतत्व पाक्षिक 16 से 30 अप्रेल 2015 मुझे आनंद बिलथरे जी प्रेम नगर बालाघाट द्वारा प्राप्त हुई। पढने से अत्यंन्त खुशी हुई। आपके व्यक्तिगत विचारों से अवगत होकर मैं अति आनंदित हुआ। मुझे आपकी कृतज्ञता स्वीकार हुई। सुझाव अपना आपके चाहे अनुसार देना उचित समझकार अवगत किया। आपके द्वारा लिखा गया है कि मैं चुनाव के समय भी एक पृथक संविधान संशोधन सभा पर जोर देता रहा।

इस पर मेरा भी विचार है कि संविधान संशोधन अत्याधिक न होते तो ज्यादा अच्छा होता क्योंकि संविधान के मूल उद्देश्य एवं ठोस परिणामो में शिथिलता का अभाव न होने पावें। यद्यपि संविधान रचयिता द्वारा समय–समय पर आवश्यकतानुसार यदि अत्यंत जरूरी हो तो समता सुरक्षा एंव शान्ति यृक्ति तथा सैंद्धान्तिक रूप से ही राजनीति को महत्व देनाचाहिए यह मेरा विचार है।

हम भारत के सभी लोग भारतीय है और भारतीय ही रहेंगे तथा पूर्व में भी भारतीय ही थे। भारत को एक सम्पूर्ण प्रभूत्व संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य के लिये तथा उसके समस्त नागरिको के लिये सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार अभिव्यक्ति विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता क्षमता, व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने बन्धुता बढाने वाली दृढ संकल्पित होकर इस संविधान को अंगीकृत करते हुए हम सभी भारतीय ने मिलजुल कर अन्य किसी भी प्रकार के विवादों से दूर रहकर अपने–अपने आचरणों के उतारना चाहिए।

साथ ही मेरे विचार यह भी है कि किसी भी देश का संविधान चलाने की प्रक्रिया उस देश के निवासियों के पर निर्भर करती है। हमारे देश का अर्थात भारत का संविधान बहुत अच्छा है। अन्य सभी राष्ट्रो की अपेक्षा अधिक उपयुक्त और दृढ है। किन्तु इसी संविधान चलाने वाले महान पुरूषो की अच्छाई अथवा बुराई के पर निर्भर होता हैं। आपके विचार है कि सत्ता परिवर्तन नहीं बल्कि व्यवस्था परिवर्तन होना चाहिए था जैसा कि अन्ना हजारे जी,गांधी जी, संत विनोबा जी आदि के विचार थे। यह बिल्कुल सत्य है। यह विचार भी उचित है। स्पष्ट है कि सैद्धान्तिक राजनीति मे त्याग छुपा रहता है। इसमे कष्ट में भी सुख मिलता है। किन्तु व्यावहारिक राजनीति में केवल लोभ लालच एवं लाभ ही मिलता है तथा द्वेषता का प्रादुर्भाव बढता जाता है, जिससे चरित्र गिरता है, बनता नहीं। सैद्धान्तिक राजनीति की सीढी से नीचे गिर जाना व्यावहारिक राजनीति का फल है। माननीय मोदी जी की लहर हो या अरविन्द केजरीवाल, दोनो ही मे तानाशाही के गुण परिलक्षित होते दिखाई दे रहे है एवं अमल में किसी भी दल में आंतरिक लोक तंत्र नहीं है और मेरे विचार से अब संघ भी माननीय मोदी जी को परेशानीमें डाल रहा हैं ।

महिला सशक्तिकरण के विषय में आपने मेरे विचार चाहने की कोशिश की है तो इसमे मेरे विचार है कि वर्तमान राज्य सरकार सह केन्द्र सरकार दोनो मिलकर तो महिला सशक्तिकरण की बात कर रहे है वे भी भारतीय है

और हम भी भारतीय है। आप हम सभी ही भारतीय रहेंगे। किन्तु पुरूष एंव महिला मे सशक्तिकरण के आपस में बटवारे के दो अलग–अलग के पक्ष हो ऐसे दोनों अलग–अलग पक्षो केमत मे होना मेरे विचार उचित प्रतीत नहीं होता। यद्यपि महिला प्रधान हो भी जावें। हरियाणा में पुरूष के नेम प्लेट को हटाकर महिला के नेम प्लेट भले ही मकानो में लगा लेवे किन्तु पुरूष की प्रधानता नीचता की ओर कदापि नहीं होगी। यद्यपि महिला देवी स्वरूप है किन्तु मेरे विचार से भविष्य मे फूट दरार की भावना उत्पन्न होने की संभावना से नकारा नही जा सकता।

उत्तर–मैं आपसे सहमत हूॅ कि संविधान संशोधन बहुत गंभीरता पूर्वक विचार करके ही करना चाहिए। यही कारण है कि मै वर्तमान संसद के संविधान संशोधन के असीम अधिकारो पर संविधान सभा के हस्तक्षेप की आवश्यकता समझता हूॅ । स्वतंत्रता के बाद के 67 वर्षो मे ही हमारे नेताओ ने घास भूसा के समान संविधान के सैकडो संशोधन कर दिये जो उचित नही था।

संविधान की उद्देशिका मे व्यक्ति और नागरिक दो अलग–अलग शब्द है इसका अर्थ है कि दोनों के अर्थ भी अलग–अलग है। इसपर भी विचार होना चाहिये। संविधान न तो नागरिको के लिये मार्गदर्शक होता है नही व्यक्तियों के लिये। संविधान उस प्रक्रिया का नाम है जिसकी सीमाओ के अंदर रहते हुए राज्य कानून व्यवस्था का पालन कराता है। संविधान राज्य को बाध्य करता है किवह अपनी सीमाएं कभी न उल्लंघन करें। इसी तरह राज्य की तीनो ईकाइयां मिलकर संविधान की इच्छानुसार कार्यपालिका का काम करती है। राज्य की विधायिका और कार्यपालिका अलग–अलग होते है। किन्तु संविधान के मामले में संसद भी कार्यपालिका का ही अंग है। विधायिका का नहीं। कार्यपालिका तथा विधायिका को बिल्कुल अलग–अलग होना चाहिये था किन्तु राज्य व्यवस्था में भी ये अलग–अलग नही रह सके, और संविधान व्यवस्था मेभी। भारत का संविधान दुनियां का सबसे घटिया संविधान है। दुनियां के संविधानो मे संविधान संशोधन मे संसद की भूमिका के साथ–साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष या आंशिक भूमिका समाज की होती हे। कई देशो मे तो संविधान संशोधन के अतिरिक्त भी आवश्यकतानुसार जनमत संग्रह की परिपाटी है। किन्तु भारत में संविधान संशोधन के असीम अधिकार संसद ने अपने पास समेट लिये है। और उसमे समाज की कोई भूमिका नहीं है। लोक तंत्र में व्यक्ति की उच्चश्रृखलता पर कानुन का नियंत्रण होता है ,कानून पर विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका का नियन्त्रण होता है, और संविधान पर समाज का नियन्त्रण होता है किन्तु भारत मे जिस संसद पर संविधान का नियन्त्रण होता है उसी संविधान पर संसद का नियन्त्रण हो जाता है। यह बहुत बडी खामी है ।

यदि राज्य उच्चश्रृखल होता है तो इसका दोष संविधान का है, समाज का नहीं।क्योंकि संविधान द्वारा बनाए गए नियमों के अंतर्गत ही समाज चुनाव करता है और वे संविधान के नियम संसद अपने अनुसार बना लेती है। यदि भारत मे व्यक्ति उच्चश्रृखल है, विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका मनमानी कर रहे है तो इसका दोष या तो उनका है अथवा उस संविधान का है जो इनपर नियन्त्रण नहीं कर पा रहा।

मोदी जी तथा अरविन्द केजरीवाल दोनों ही केन्द्रित शासन व्यवस्था के पक्षधर है। मोदी जी की केन्द्रित व्यवस्था के अच्छे परिणाम दिख रहे हैं क्योंकि अब तक के अनुसार उनकी नीयत साफ है। अरविन्द केजरीवाल की परीक्षा होनी अभी बाकी है। समय बतायेगा कि किस दिशा मे जाना चाहते हैं किन्तु इतना स्पष्ट हो गया है कि वे भी लोक स्वराज्य की दिशा मे नहीं जा सकेंगे। न मैंपहले महिला सशक्तिकरण के पक्ष में था, न अब हूॅ। मैं तो चाहता हूॅ कि धर्म, जाति, लिंग, के आधार पर बने सभी कानून हटाकर समान नागरिक संहिता लागू कर दी जाये।

5 श्री नरेन्द्र सिंह कछवाहा,कांकरोली,राजस्थान ज्ञानतत्व–52735

दिनॉक 4.6.2015 को श्री बजरंग मुनि जी की ओर से प्रिंटेड अन्तर्देशीय पत्र प्राप्त हुआ।

पत्र में मुझे ''एक सौ सदस्यीय केन्द्रीय समिति'' का सदस्य चयन करना अवगत कराया है। इसके लिये धन्यवाद!

पत्र हस्ताक्षर रहित है। अच्छा होगा आपके पत्राचार किसी जिम्मेदार व्यक्ति पदाधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित हों। जो कि संगठनात्मक उत्तरदायित्व की दृष्टि से आवश्यक हैं।

पत्र में लोक–प्रदेश की कमेटी बनाने का निर्देश दिया है। किन्तु लोक प्रदेश की भौगोलिक स्थिति स्पष्ट नहीं की है, जो ''व्यवस्थापक'' स्तर पर होनी चाहिये। लोक प्रदेश का कार्य क्षेत्र स्पष्ट हो जाता है तो एकाधिक कार्यकर्ताओं के मध्य क्षेत्र collide नहीं हो पाते। अतः पूरे देश को उपयुक्त रुप से लोक प्रदेशों में विभक्त का दायित्व देंगे तो कार्यकर्ता उस क्षेत्र में निश्चित होकर प्रयास करके कमेटी बनाने का काम कर सकेगा। जो कि विस्तृत क्षेत्र के जिलों व विकास खंडो में सम्पर्क करके करना होगा।

इस आन्दोलन के लिये ऐसी कमेटी के सदस्यों को आश्वस्त और सन्तुष्ट करने पर ही जोडा जा सकता हैं अतः कोई प्रकाशन सामग्री पेम्पलेट/पुस्तिका इस कार्य विशेष को उपलब्ध कराई जाय तो कार्य को त्वरित गति से करने में सहायक रहेगा।

''व्यवस्थापक'' के चार सूत्री आन्दोलन में ''प्रति व्यक्ति को प्रतिमाह दो हजार मूल रुपये पेंशन देने की व्यवस्था'' पर स्थानीय आयोजित संगोष्ठी में एतराज किया गया था। इस बारे में मैंने आपको सूचित किया था। एतराज यह है कि एक परिवार के सामान्यतः औसत पॉच सदस्यों को 2000/–रुपये प्रति व्यक्ति से 10000/–रुपये की पेंशन की आय हो जाता है तो फिर

इसका सीधा प्रभाव युवाओं,सक्षम महिलाओं आदि पर पडेगा। वह क्यों कोई उत्पादक कार्य,रोजगार करने को आतुर तत्पर होंगे। गरीब स्तर के परिवार को तो 2–4 हजार ही प्रति माह स्वतः मिल जाय तो कुछ करने की जरुरत ही नहीं समझता। यह चौथा सूत्र सक्षम युवा तथा महिलाओं को ही नहीं आगन्तुक पीढ़ी को भी निष्क्रिय करेगा।

अतः इस सूत्र को सीमाबद्ध करना आवश्यक है। सर्वथा असक्षम,विकलांग,60–70 की उम्र से अधिक बुजुर्ग महिला–पुरुष,दुर्घटनाग्रस्त,अनाथ,असहाय आदि को पेंशन देने में किसी को एतराज नही हो सकता। यदि इस चौथे सूत्र की मंशा यही है तो सूत्र के साथ इसे स्पष्ट करने की आवश्यकता है। अन्यथा,इस चौथे सूत्र को सामान्यतः स्वीकार नही किया जायेगा। ऐसी मेरी मान्यता है।

कृपया लोक प्रदेश का कार्यक्षेत्र निर्धारित करें तथा आन्दोलन के चौथे सूत्र को स्पष्ट करावें। जिससे कि आगे प्रयास किये जा सकें। धन्यवाद!

उत्तरः—पत्र में हस्ताक्षर नहीं हो सका,जो होना चाहिए था। अब तक मेरी ओर से यदि पत्र गये है तो अधिकांश में हस्ताक्षर नही हो सका। अब कार्यालय दिल्ली में शुरु हो गया है टीकाराम जी मुख्य कार्यपालन अधिकारी हैं। कोशिश होगी कि कार्यालय से हस्ताक्षरित पत्र जावें।

राजस्थान में कुल पॉच लोक प्रदेश बने हैं 2,3,4 अक्टूबर की बैठक में विधिवत घोष्णा हो जायेगी।

पूरे कार्यक्रम के लिए संक्षिप्त में एक पत्रक तैयार किया गया है जिसका प्रारुप इस अंक में अंत में छपा है। यह पत्रक आमतौर पर वितरित होना शुरु हो गया है। अक्टूबर की बैठक में और वितरित होने लगेगा।

प्रति व्यक्ति दो हजार रुपया देने से हर व्यक्ति को ऐसा ही महसूस होता है जैसा आप कह रहे है। लेकिन अनुभव बताता है कि जिन व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति गरीबी से थोड़ी भी अच्छी है। वे अपनी स्थिति को और अधिक अच्छा करने के लिए भरपूर कोशिश करते हैं। कुछ थोड़े ही लोग हैं जो आर्थिक स्थिति सामान्य होने के बाद काम करना बंद कर दें। यह सही है कि गरीबी के नीचे जीवन जीने वाले आमतौर पर पैसा मिलते ही काम नहीं करते। हम जो सोच रहे है वह एक प्रयोग हैं। संभव है कि गरीबी रेखा के नीचे वाले कुछ सक्षम होते ही अधिक काम करने लग जावें। प्रतीक्षा करिये परिणाम अच्छे ही होंगे। इसलिए इस चौथे सूत्र की उपयोगिता समझी गई,और गरीबी रेखा के नीचे जीवन जीने वाली आधी आबादी को यह धन देने का प्रस्ताव है। एक बात और है कि गरीब ग्रामीण श्रमजीवी से हम जितना टैक्स वसूल कर रहे हैं और मध्यम उच्चवर्ग की सुविधा में अपयोग कर रहें है यह तो सरासर अन्याय है,अमानवीय है,ग्रामीण गरीब श्रमजीवी के उत्पादन और उपभोग की वस्तुओं पर औसत 10 प्रतिशत कर है जो उत्पादन पर अलग है और उपभोग पर अलग। अब तक हमने साइकिल से भारी कर वसूल कर रसोई गैस को छूट दी। मैं चाहता हूँ कि यह अन्याय भी बंद हो और बदले में उन्हें कुछ सहायता देकर नया प्रयोग किया जावे। यदि ऐसा महसूस होगा कि इससे विपरीत प्रभाव है तो इसे बंद भी किया जा सकता है। इस चौथे मुद्दे मे कोई संशोधन करना मेरे लिये संभव भी नही है क्योकि कई वर्ष तक गंभीर बहस के बाद इस मुद्दे को स्वीकार किया गया है अन्यथा पहले तो हमारे तीन ही मुद्दे थे। दूसरी बात यह भी है कि प्रथम दो मुद्दों पर हम ज्यादा जोर दे रहे है तथा शेष दो मुद्दो को हम साथ मे रख रहे है।

उत्तरार्ध

-- व्यवस्थापक का घोषणा पत्र

गॉधी की मृत्यु के तत्काल बाद ही हमारे नेताओं ने लोकतंत्र की आदर्श परिभाषा ''लोक नियंत्रित तंत्र'' को बदल कर ''लोक नियुक्ति तंत्र'' कर दिया। भौतिक विकास बढ़ा किन्तु नैतिक पतन भी बढ़ता चला गया। ''व्यवस्थापक'' ने महसूस किया कि हमारे संविधान निर्माताओं ने लोक और तंत्र अर्थात् समाज और राज्य के सम्बन्धों की गलत व्याख्या करके उसे राज्य के पक्ष में एकपक्षीय रुप से झुका दिया। निर्वाचित संसद अथवा संसद द्वारा बनी इकाई स्वयं को मैनेजर या प्रबंधक तो कह सकती है किन्तु सरकार नहीं। गॉधी के बाद जयप्रकाश या आंशिक रुप से अन्ना हजारे ने सहभागी लोकतंत्र की दिशा में बढ़ने की कोशिश की किन्तु विभिन्न कारणों से असफल रहें। व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी सहभागी लोकतंत्र की दिशा में विश्व स्तरीय प्रयत्न करना चाहती है जिसकी शुरुवात भारत से हो रही है। इस सम्बन्ध में प्रारम्भ में हमारे चार सुझाव हैं जिसमें से प्रथम दो विश्व स्तरीय सहभागी लोकतंत्र के निमित्त भारतीय संसद के लिए हैं तथा शेष दो अस्थायी सुझाव के रुप में भारत तक सीमित हैं। वे चार विषय हैः–

(1)परिवार,गॉव,जिले को संवैधानिक अधिकार
(2)लोक संसद
(3)राइट टू रिकाल
(4) प्रत्येक व्यक्ति को दो हजार मूल रुपया मासिक जीवन भत्ता।

इन सुझावों की विस्तृत विवेचना लोक स्वराज्य बिल के रुप में प्रस्तुत है। ''व्यवस्थापक'' भारत के सभी नागरिकों में ऐसी जन चेतना जागृत करेगा कि वे या तो वर्तमान संसद पर दबाव बनाकर लोक स्वराज्य बिल को पारित करावें अथवा ऐसे जनप्रतिनिधियों को संसद में भेजकर संविधान संशोधन का मार्ग प्रशस्त करें।

लोक स्वराज्य बिल

1. उद्देश्य : 'तंत्र', नियुक्त होने के आधार पर, 'स्वयं को सरकार' कहने या समझने के स्थान पर 'प्रबंधक' या 'मैनेजर' समझे तथा कहे। दूसरी ओर 'लोक' स्वयं को 'नियोक्ता होने' के आधार पर 'मालिक' समझे तथा कहे। 'लोकतंत्र' का अर्थ 'लोक नियुक्त तंत्र' के स्थान पर 'लोक नियंत्रित तंत्र' हो।

2. कार्य : प्रथम चरण में चार कार्य किये जाएं–1. परिवार, गांव, जिले को संवैधानिक मान्यता तथा अधिकार, 2. लोक संसद, 3. राइट टू रिकाल, 4. प्रति व्यक्ति प्रतिमाह दो हजार मूल रूपया जीवन भत्ता

3. कार्यक्रम :राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, विपक्ष द्वारा नियुक्त एक व्यक्ति, सर्वोच्च न्यायाधीश तथा सर्वोच्च न्यायालय का एक अन्य न्यायाधीश, मिलकर व्यक्तिगत आधार पर अलग–अलग चार आयोगों का गठन करें। ये चारों आयोग एक वर्ष के भीतर संसद को अपनी रिर्पोट दें।

4. आयोग के कार्य : प्रथम विषय : परिवार

क–परिभाषा

1 पिता, माता और नाबालिग संतान की वर्तमान परिभाषा

2 'संयुक्त संपत्ति' तथा 'संयुक्त उत्तर दायित्व' के आधार पर एक साथ रहने हेतु सहमत व्यक्तियो का समूह

3 कोई अन्य

ख–अधिकार

1 विवाह, सन्तानोत्पत्ति, सम्पत्ति विभाजनकर्ता की नियुक्ति, कर्ता के अधिकार,भोजन, वस्त्र, शिक्षा,रोजगार आदि के स्वतंत्र अधिकार ।

'गांव' क– परिभाषा

1 वर्तमान परिभाषा

2 एक सौ पच्चीस करोड आबादी के समय 750 से 1750 तक की आबादी को एक गांव या वार्ड घोषित करना जिससे पूरा देश दस लाख गॉवों में बंट जाये।

3 कोई अन्य

ख–अधिकार

शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ ,ग्रामीण सड़क, कुँआ आदि जल व्यवस्था, साफ–सफाई, स्थानीय स्तर की अर्थ व्यवस्था आदि।

'जिला'– क –परिभाषा : 1. वर्तमान 2. औसत सवा लाख की आबादी। 100 गांव को मिलाकर एक जिला

3 कोई अन्य

ख– अधिकार : एक से अधिक गांवो को एक साथ जोडने वाली ऐसी सडक, स्कूल, अस्पताल, पशु, चिकित्सा, जन्म–मृत्यु प्रमाण पत्र, जल प्रदाय, जिला स्तर तक की आर्थिक स्थिति आदि अनेक वे कार्य जो प्रदेश या केन्द्रीय व्यवस्था की न हो।

5. द्वितीय विषय– लोक संसद

क– निर्माण

1 रेन्डम प्रणाली से नियुक्त 543 प्रतिनिधि

2 संविधान सभा के नाम पर लोक सभा चुनाव के साथ ही दल विहीन पद्धति से चुने गये 543 प्रतिनिधि

3 सरकारी कालेजो के चुने गए एक सौ प्राचार्य जिन्हे बीए या पर के सरकारी कांलेजो के प्रोफेसर ही वोट दे। साथ ही पूर्व राष्ट्रपति, पूर्व प्रधान मंत्री तथा पूर्व सर्वोच्च न्यायाधीशों में से संसद द्वारा चुने गए ग्यारह लोग जो किसी दल से न जुडे हों।

ख : कार्य

1 संविधान संशोधन में वर्तमान संसद के समान भूमिका

2 सांसदो के वेतन भत्तो के निर्धारण में संसद के समान भूमिका

3 लोक पाल चयन

4 किन्ही दो संवैधानिक इकाइयों के बीच विवाद का निर्णय

5 कोई अन्य कार्य– जो विधायिका, न्यायपालिका या कार्यपालिका से जुडा न हो

ग : विशेष

1 लोक संसद का चुनाव निर्दलीय आधार पर होगा।

2 लोक संसद का कोई स्थायी वेतन भत्ता नहीं होगा। आवश्यकतानुसार बुलाए जाने पर भत्ता देय होगा।

3 यदि संसद और लोक संसद किसी विषय 1 या 2 पर अंतिम रूप से असहमत होते है तो अंत में जनमत संग्रह से निर्णय होगा।

6 तृतीय विषय : राइट टू रिकॉल

क– लोक सभा के किसी सांसद की संसद सदस्यता संसद या दल समाप्त नहीं कर सकेगा।

ख–लोक सभा सांसद की सदस्यता समाप्ति के लिए निम्नाकित में से कोई विधि होगी।

1 लोक सभा, संबद्ध राजनैतिक दल, सम्बन्धित लोक सभा क्षेत्र के निर्वाचित ब्लाक अध्यक्ष, अथवा किसी अन्य व्यवस्था द्वारा विधिवत प्रस्ताव करने पर उस क्षेत्र के मतदाता, रेन्डम पद्धति से चुने गए मतदाता, सभी चुने गए पंच या सरपंच, अथवा किसी अन्य प्रणाली से कराये गये मतदान द्वारा निर्णय

7. चतुर्थ विषय : प्रति व्यक्ति प्रतिमाह दो हजार मूल रूपया जीवन भत्ता

क– परिभाषा :
1– व्यक्ति का अर्थ प्रत्येक व्यक्ति से होगा। उम्र, लिंग आदि भेद नहीं किया जाएगा
2 मूल रूपया का अर्थ है 23 जुन 2014 के बाद की मुद्रा स्फीति को जोडकर
3 कृत्रिम उर्जा का अर्थ है डीजल, पेट्रोल, बिजली, गैस, मिट्टी तेल, कोयला।
ख– व्यवस्थाः पूरी आबादी की न्यूनतम आधी निचली आबादी को प्रति माह प्रति व्यक्ति दो हजार मूल रूपया जीवन भत्ता सरकार द्वारा देय होगा।
ग– क्रमांक ख के लिए धन की व्यवस्था हेतु कोई एक व्यवस्था की जाएगी।
1 सम्पूर्ण सम्पत्ति पर समान कर
2 एक निश्चित सीमा से अधिक सम्पत्ति पर कर
3 कृत्रिम उर्जा की भारी मूल्य वृद्धि
4 कोई अन्य उपाय
8. यदि किसी आयोग की सलाह को संसद अंतिम रूप से अस्वीकार कर देगी तो जनमत संग्रह द्वारा अंतिम निर्णय होगा।